अध्याय-19

शून्यकाल के उल्लेख

राज्य सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन विषयक नियमों में ऐसे विभिन्न प्रक्रियागत उपायों का उल्लेख किया गया है जिनके माध्यम से सदस्यगण सदन में सार्वजनिक महत्व के मामलों को उठा सकते हैं। परिपाटियों और प्रथाओं के द्वारा कुछ अन्य उपायों का भी विकास हुआ है हालांकि नियम पुस्तिका में विनिर्दिष्ट रूप से उन्हें स्वीकृति नहीं दी गई है। शून्यकाल (ज़ीरो आवर) के उल्लेख इसी श्रेणी में आते हैं।

परिभाषा

अंग्रेजी के शब्दकोशों में शून्यकाल (ज़ीरो आवर) के निम्नलिखित अर्थ दिए गए हैं: ''वह समय (आवर) जिसमें कोई योजनाबद्ध कार्यवाही—विशेषत: सैनिक कार्यवाही आरंभ की जानी है'', ''एक नाजुक क्षण''[1], ''किसी आक्रमण की शुरुआत के लिए निर्धारित किया गया समय'', ''एक निर्णायक या संकटापन्न समय'',[2] ''ऐसा समय जब कोई अत्यंत महत्वपूर्ण निर्णय लिया जाना है या घटनाक्रम में कोई निर्णायक परिवर्तन होने ही वाला है; संकट; दिन के समय की गणना के आधार के रूप में निर्धारित समय''।[3] तथापि, भारत में संसदीय व्यवहार की भाषा में शून्यकाल (ज़ीरो आवर) का एक विशेष अर्थ में प्रयोग किया जाता है क्योंकि उस काल (आवर) में सदन में 'असली कार्रवाई' शुरू होती है। इस अर्थ में शून्यकाल की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि वह प्रश्नकाल की समाप्ति और कार्यावलि में उल्लिखित नियमित कार्य के आरंभ के बीच का काल है। दूसरे शब्दों में शून्यकाल प्रश्नकाल, जोकि पूर्वाह्न 11.00 बजे से मध्याह्न 12 बजे तक होता है, की समाप्ति पर अर्थात् मध्याह्न 12 बजे से शुरू होता है। यद्यपि शिष्टोक्ति के रूप में इसे अंग्रेजी में ज़ीरो आवर अर्थात् घंटा कहा जाता है तथापि हो सकता है कि वह एक घंटे तक न चले और आधा घंटे या उससे अधिक या कम समय तक चले। कभी-कभी शून्यकाल पूरे एक घंटे तक या उससे भी अधिक समय तक चल सकता है और यह इस बात पर निर्भर है कि सदस्यगण कितने मामलों को उठाना चाहते हैं और ऐसे मामले कितने गंभीर और कितने महत्व के हैं। यह भी आवश्यक नहीं है कि सत्र के दौरान प्रतिदिन ही शून्यकाल हो।[4]

> उदाहरण के लिए, समूचे 130वें सत्र (23 अप्रैल से 10 मई, 1984) के दौरान शून्यकाल के उल्लेखों में मुश्किल से एक घंटा लगा। 3 अगस्त, 1993 को शून्यकाल दो घंटे सत्तावन मिनट तक चलता रहा और इस दौरान मुख्य निर्वाचन आयुक्त द्वारा चुनावों के स्थगन के बारे में पन्द्रह सदस्य बोले। 5 अगस्त, 1993 को दो उल्लेखों पर मध्याह्न-भोजन से पहले का सारा समय व्यतीत हो गया। 18 अगस्त, 1994 को शून्यकाल के दौरान हुबली घटना के बारे में उठाए गए मामले में लगभग चार घंटे लग गए और उसने एक पूरे वाद-विवाद का रूप ले लिया। किंतु 4 मई, 1994 को शून्यकाल के दौरान उठाए तीन मामलों में सिर्फ नौ मिनट लगे और अगले दिन शून्यकाल में एक ही मामला उठाया गया जिसमें सिर्फ तीन मिनट लगे।
>
> 15 मार्च, 1995 को शून्यकाल में बिहार में संवैधानिक संकट का मामला उठाया गया और वह तब तक चलता रहा जब तक मध्याह्न-भोजन के अवकाश के लिए सदन की बैठक स्थगित नहीं हुई। 21 मार्च, 1995 को मुम्बई में विदेशियों का पता लगाने के संबंध में महाराष्ट्र के मंत्रियों के कतिपय वक्तव्यों के बारे में शून्यकाल में एक मामला उठाया गया जिसमें दो घंटे सत्ताईस मिनट लग गए। पाकिस्तान उच्चायुक्त द्वारा विदेश मंत्रालय में राज्य मंत्री के प्रति कथित दुर्व्यवहार का मामला 28 मार्च, 1995 को शून्यकाल के दौरान उठाया गया और उसमें

पचास मिनट लग गए। शिव सेना प्रमुख के कथित वक्तव्य के मामले पर 30 मार्च, 1995 को मध्याह्न-भोजन के पहले और उसके बाद कुल मिलाकर दो घंटे तैंतालीस मिनट लग गए और शून्यकाल अपराह्न 4 बजे तक चलता रहा। 10 मई, 1995; 19 मई, 1995; 30मई, 1995; 1 जून, 1995 और 31 जुलाई, 1995 को शून्यकाल में उठाए गए मामलों पर हर दिन एक घंटे से अधिक समय लगा और एक से अधिक सदस्य बोले।

राज्य सभा अपने प्रारंभिक दिनों के दौरान मध्याह्न-भोजन के अवकाश के लिए मध्याह्न पश्चात् 1 बजे स्थगित हो जाया करती थी और सामान्यत: शून्यकाल इसी समय तक सीमित रहता था ताकि मध्याह्न-भोजन के अवकाश के बाद सदन के पुन: समवेत होने पर कार्यावलि के अनुसार नियमित कार्य को आरंभ किया जा सके। ऐसा लगता है कि जन-संचार माध्यमों द्वारा शून्यकाल शब्द का प्रयोग करने का यही कारण है। शून्यकाल शब्द के गढ़े जाने का यह भी कारण है कि ऐसा समझा जाता है कि शून्यकाल 12 बजे से शुरू होता है और 12 बजे का उपनाम शून्यकाल (ज़ीरो आवर) है।

आरंभ

शून्यकाल का आरंभ साठ के दशक से हुआ जब सार्वजनिक महत्व के अत्यंत महत्वपूर्ण और अविलंबनीय विषयों को सदस्यों द्वारा प्रश्नकाल के समाप्त होते ही उठाया जाने लगा। सदस्यगण सभापति की पूर्व अनुमति से और कभी-कभी बिना अनुमति के ऐसे मुद्दे उठाते थे। एक बार सभापति की अनुमति से एक सदस्य ने यह मामला उठाया कि संसद् के सत्र के दौरान मंत्रीगण संसद् के बाहर नीति संबंधी घोषणाएं कर रहे हैं। इस पर एक अन्य सदस्य ने एक प्रक्रिया संबंधी मुद्दा उठाया कि नियम पुस्तक में उल्लिखित नियमों का उल्लंघन करके महत्वपूर्ण विषयों को उठाया जा रहा है। इस पर सभापति ने निम्नलिखित टिप्पणियां कीं:

''माननीय सदस्यों को विदित है कि संसद् में नियमों के अलावा परिपाटियां भी हैं। डा॰ राधाकृष्णन् के समय से इस सदन में शून्यकाल की परिपाटी रही है। शून्यकाल में सदस्यों को मुद्दे उठाने की अनुमति दी जाती रही है और दोनों ही सदनों में ऐसा होता रहा है।''[5]

सभापीठ के कड़े रवैये और घोर विरोध के होते हुए भी सदस्यगण नियमों में कोई विशिष्ट स्वीकृति न होते हुए भी संसद् को एक नए संसदीय तरीके या उपाय से अवगत कराने (अथवा उसे औपचारिक रूप दिलाने) का अथक प्रयास करते रहे और वे इसमें सफल भी हुए। एक ऐसी प्रथा विकसित होने लगी कि सभापति द्वारा प्रश्नकाल समाप्त होने की घोषणा होते ही कोई सदस्य ऐसे मामले को उठाने के लिए खड़ा हो जाता था जो उसके विचार में इतना अधिक महत्वपूर्ण होता था कि उसकी ओर सदन का और सदन के माध्यम से सरकार का ध्यान दिलाना आवश्यक था क्योंकि उस मामले में देरी सहन नहीं की जा सकती थी और सामान्य तथा उपलब्ध प्रक्रिया के अधीन उसे उठाने के लिए प्रतीक्षा नहीं की जा सकती थी। तथापि, विख्यात संसदविद् स्वर्गीय प्रोफेसर एन॰ जी॰ रंगा का कहना था कि ''शून्यकाल का आरंभ होना एक अत्यंत विलक्षण और उत्तेजक घटना है। उसका जो विकास हुआ है और उसे जो स्थायित्व प्राप्त हुआ है उसके लिए प्रक्रिया नियमों की कमियां उतनी जिम्मेदार नहीं हैं जितनी मंत्रालयों की बढ़ती जा रही कमजोरी, सदस्यों का काबू से बाहर हो जाना और राजनैतिक वातावरण की उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही जटिलता जिम्मेदार है। इसके लिए किसी दिन होने वाली घटनाओं के संबंध में कार्यवाही करने का असहनीय और दुर्दमनीय आग्रह इतना अधिक जिम्मेदार नहीं हो सकता।''[6]

प्रश्नकाल की समाप्ति और नियमित कार्यवाही के आरंभ के बीच के समय का अब अनेक सदस्यों द्वारा उपयोग किया जा रहा है। कुछ वस्तुत: महत्वपूर्ण मुद्दों की ओर सदन का और उनके माध्यम से राष्ट्र का

ध्यान आकर्षित करने के लिए अनुभवी संसदविद् शून्यकाल का पूरे कौशल के साथ उपयोग करते हैं। इस प्रथा को संसद् में एक ऐसा विशिष्ट स्थान प्राप्त होने लगा जिसके बारे में कोई पूर्वोदाहरण नहीं था और वह ''भारतीय संसद् की कार्य-सूची की स्थायी विशेषता तो बन गई किंतु ऐसा होने पर भी उसे कोई मान्यता नहीं मिली।''[7] शून्यकाल की कार्यवाही को जन-संचार माध्यमों में बढ़-चढ़ कर स्थान मिलने लगा और इसके कारण सदस्यगण इस अविलंब इस्तेमाल किए जा सकने वाले और सुविधाजनक उपाय को उत्तरोत्तर अधिकाधिक संख्या में अपनाने लगे।

1960 के दशक से शून्यकाल सदन की कार्यवाही का नियमित अंग बन गया है। यह बात इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती है कि जब एक बार सत्र की अवधि एक सप्ताह के लिए बढ़ाए जाने पर और सदन के कार्य पर विचार हो रहा था तब उपसभापति ने कहा, ''किंतु हमें शून्यकाल को नहीं भूलना चाहिए। शून्यकाल बहुत कम समय के लिए होना चाहिए ताकि हम हर दिन कार्यावलि का उल्लंघन न करें।''[8] आशा के बारे में एक कहावत में थोड़ा-सा परिवर्तन करके हम शून्यकाल का संक्षिप्त किंतु सुस्पष्ट रूप से इस प्रकार वर्णन कर सकते हैं: ''शून्यकाल देहात में एक पथ के समान है। वहां कोई पथ न होने पर भी जब लोग उस पर चलते हैं तो वह अस्तित्व में आ जाता है।''

शून्यकाल का उद्देश्य

यद्यपि सदस्यों, जन-संचार माध्यमों और जनता के बीच शून्यकाल को लोकप्रियता और स्वीकार्यता मिल रही थी तथापि, पीठासीन अधिकारियों द्वारा उसका अनुमोदन नहीं किया गया क्योंकि शून्यकाल में सदन में अव्यवस्था और कटुता का वातावरण उत्पन्न हो जाता था जिससे सदस्यों का आचरण अमर्यादित हो जाता था और सभा का अमूल्य समय व्यर्थ चला जाता था। शून्यकाल की प्रथा के आरंभ होने और जड़ें जमा लेने के कारण भारत के विधान-मंडलों के पीठासीन अधिकारियों को बहुत चिंता होने लगी। 1967 में (नई दिल्ली में), 1969 में (गोवा में) और 1978 में (जयपुर में) पीठासीन अधिकारियों के सम्मेलन में शून्यकाल के बारे में विचार-विमर्श हुआ। शून्यकाल के बारे में कहा गया कि वह ''जनता के पैसे की बर्बादी है'', ''पागलपन का काल है'', ''एक बुरे दिन की महान शुरुआत है'' और ''एक अनचाही चीज़ है।'' साथ ही इस तथ्य को भी माना गया कि प्रश्नकाल के बाद शून्यकाल ही ऐसा काल है जो जीवंत और महत्वपूर्ण हो गया है। यह भी माना गया कि वह व्यक्तिगत शिकायतों को सदन के सामने रखने का एक तरीका है और उसे न तो समाप्त किया जा सकता है और न ही छोड़ा जा सकता है। एक ओर यह विचारधारा थी कि पीठासीन अधिकारियों द्वारा सदन के सामान्य काम-काज को चलाने में शून्यकाल सबसे बड़ी अड़चन है और दूसरी ओर यह विचारधारा थी कि उसके द्वारा संसदीय शब्दकोश अथवा संसदीय प्रथा में मौलिक योगदान हुआ है।

पणजी (गोवा) में हुए सम्मेलन में एक पीठासीन अधिकारी ने शून्यकाल के कारणों का विश्लेषण करने के लिए नियुक्त हाउस ऑफ कॉमन्स की प्रक्रिया संबंधी प्रवर समिति के प्रतिवेदन का हवाला देते हुए कहा कि इस प्रतिवेदन से जो तस्वीर उभरती है वह भारत की स्थिति पर काफी हद तक लागू होती है। प्रवर समिति ने कहा था:

> ''वर्तमान सार्वजनिक रुचि के महत्वपूर्ण मामलों पर बहस करने के अवसरों पर विचार करते हुए आपकी समिति को इस आलोचना की जानकारी है कि सदन सरकार के निर्धारित विधायी कार्यक्रम में इतना अधिक अंतर्ग्रस्त है कि वह उन मामलों पर ध्यान नहीं दे सकता जिनका बाहर के लोगों के साथ बिल्कुल निकट का सरोकार है। यह कहा जाता है राष्ट्रीय बहस के मंच के रूप में संसद् अपनी हैसियत खोती जा रही है।''[9]

प्रवर समिति के समक्ष अपना साक्ष्य देते हुए हाउस ऑफ कॉमन्स के अध्यक्ष (स्पीकर) का कहना था:

''संसद् सिर्फ सरकार और विपक्ष नहीं है, उसमें 630 अलग-अलग सदस्य हैं और उसमें अल्पमत वाले भी हैं, यहां तक कि एक सदस्यीय अल्पमत भी है। ऐसा सोचना पूरी तरह से उचित है कि ऐसा हो सकता है कि न तो सरकार और न ही प्राधिकृत विपक्ष विभिन्न कारणों से ऐसे मामले में शीघ्रतापूर्वक विचार करना न चाहे जिस पर तुरंत विचार-विमर्श करना सदन में अल्पमत वाले थोड़े से सदस्यों के विचार में आवश्यक हो। संसद् के सामने जो चिरंतन समस्या है वह यह है कि विभिन्न दावों अर्थात् सरकार, विपक्ष, अल्पमत और सदन में पीछे की बैंचों में बैठने वाले अकेले सदस्यों के दावों के बीच संगति कैसे बिठाई जाए।''[10]

शून्यकाल को विनियमित करना

सदन के वातावरण में कटुता उत्पन्न होने और उसका बहुमूल्य समय बर्बाद हो जाने के कारण सदन के निर्धारित कार्य को अस्त-व्यस्त न होने देने के लिए और उठाए गए मुद्दों का उत्तर देने के लिए सरकार को पर्याप्त अवसर देने हेतु राज्य सभा में सत्तर के दशक में विशेष उल्लेख की प्रक्रिया की शुरुआत की गई। किंतु पिछले अनेक वर्षों के दौरान शून्यकाल के उल्लेखों ने विशेष उल्लेखों का स्थान लेने की बजाय एक अतिरिक्त उपाय का रूप धारण कर लिया है। विशेष उल्लेख की प्रक्रिया के अपनाए जाने पर भी शून्यकाल की मांग कम नहीं हुई है।

एक सदस्य ने कहा कि वह लोक सभा के एक सदस्य की हत्या के प्रयास के एक मामले को विशेष उल्लेख के रूप में नहीं बल्कि शून्यकाल के उल्लेख के रूप में उठाना चाहते हैं और उन्होंने इसके लिए सूचना दे दी है। सभापति ने, उनसे कहा कि वे इस मामले को विशेष उल्लेख के रूप में उठा सकते हैं किंतु सदस्य का आग्रह था कि उन्हें शून्यकाल में इस मामले को उठाने की अनुमति दी जाए। सदस्य को इसके लिए अनुमति दे दी गई किंतु साथ ही सभापीठ ने टिप्पणी की: ''मेरे विचार में आप इसे दुहरा शून्यकाल बना रहे हैं।''[11]

एक सदस्य को विशेष उल्लेख के रूप में किसी मुद्दे को उठाने की अनुमति दी गई थी। उन्होंने इस विषय को शून्यकाल में उठाने के लिए अनुरोध करते हुए सभापीठ से कहा: ''विशेष उल्लेख भिन्न है, शून्यकाल भिन्न है। यह मेरा शून्यकाल का मुद्दा है।'' सभापीठ ने टिप्पणी की: ''शून्यकाल का कोई मुद्दा नहीं होता।''[12]

एक बार उपसभापति ने टिप्पणी की: ''घड़ी में कोई शून्य नहीं होता, उसमें सिर्फ 1 से 12 तक के अंक होते हैं।''[13]

एक बार उपसभाध्यक्ष ने यह टिप्पणी की: ''मैं आप सभी को शून्यकाल को एक गरिमापूर्ण शांतिकाल बनाने के लिए धन्यवाद देता हूं।''[14]

एक बार उपसभापति ने कुछ सदस्यों को ध्यानाकर्षण के पूर्व मुद्दों को उठाने की अनुमति नहीं दी। इस पर एक सदस्य ने कहा: ''आप शून्यकाल को चुनौती नहीं दे सकतीं और उसका विरोध नहीं कर सकतीं। शून्यकाल का दर्जा सबसे ऊपर है''। इस पर उपसभापति की टिप्पणी थी: ''नियमों में शून्यकाल का कोई उल्लेख नहीं है।''[15]

तथापि, एक बार जब कुछ सदस्यों ने मुख्य निर्वाचन आयुक्त द्वारा चुनावों को निलंबित किए जाने से उत्पन्न स्थिति पर विचार करने के लिए प्रश्नकाल को निलंबित करने की सूचना दी थी तब सभापति ने उनसे कहा कि वे इस मामले को प्रश्नकाल के बाद उठाएं और अंततः शून्यकाल के दौरान इस मामले को उठाया गया।[16]

अस्सी के दशक में सभापति (श्री आर॰ वेंकटरामन्) ने एक दिन ध्यानाकर्षण संबंधी मामले उठाने और उससे अगले दिन विशेष उल्लेख करने की अनौपचारिक प्रथा शुरू की थी ताकि शून्यकाल से बचा जा सके। उदाहरण के लिए जब उन्होंने एक सदस्य को संसद् के सत्र के चलते रहने पर भी मंत्रियों द्वारा नीति संबंधी वक्तव्य देने के मामले को उठाने की अनुमति दी तब एक सदस्य ने इस पर आपत्ति की। सभापति का कहना था: ''विपक्ष से मुझे जो सहयोग मिला है उसके फलस्वरूप मेरे लिए शून्यकाल समाप्त करना संभव हुआ है'' किन्तु चूंकि इस मामले का संबंध सदन से था इसलिए उन्होंने इस मामले को उठाने की अनुमति दी थी।[17]

तथापि, शून्यकाल का समाप्त किया जाना सभी सदस्यों को पसंद नहीं आया। 13 दिसम्बर, 1985 को एक सदस्य ने शिकायत की: ''एक के बाद एक विपक्ष के सभी हथियारों को, चाहे वह ध्यानाकर्षण हो या शून्यकाल हो, कुंद किया जा रहा है।'' सभापति ने स्थिति को इस प्रकार स्पष्ट किया:

> ''सामान्यत: सवेरे दस बजे मैं अपने कक्ष में आ जाता हूं। जो सदस्य मुद्दों को, विशेष उल्लेख या ध्यानाकर्षण को, उठाना चाहते हैं वे मेरे पास आकर मुझसे बात करते हैं। यदि चार-पांच व्यक्ति चार-पांच अलग-अलग मुद्दों को उठाने की बात करते हैं तो मैं यह निर्णय करता हूं कि क्या महत्वपूर्ण है और इस आधार पर मैं उन्हें अनुमति देता हूं।''[18]

कुछ महीनों के बाद उसी सदस्य ने यह मामला उठाया कि शून्यकाल का विशेषाधिकार छीना जा रहा है और सिर्फ राज्य सभा में इसकी अनुमति नहीं दी जा रही है। सभापति ने पुन: अपनी स्थिति स्पष्ट की और यह भी कहा कि यदि सदस्यगण उनके चैम्बर में आकर इन सब बातों को कहते तो समय की बचत हो सकती थी।[19]

जनसंचार माध्यमों ने भी इस स्थिति पर अनुकूल प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। एक समाचार-पत्र ने 19 मार्च, 1985 से आरंभ हुई राज्य सभा की कार्यवाही की समीक्षा करते हुए इस बात पर दुख प्रकट किया कि राज्य सभा में शून्यकाल की वस्तुत: बलि दी जा रही है। समीक्षा के अंत में उसने सलाह दी कि ''यह सुनिश्चित करने के लिए कि शून्यकाल का अस्तित्व समाप्त न हो, सभापति को भी अपने पूर्ववर्तियों की भांति थोड़ा अधिक उदार होना पड़ेगा।''[20]

कार्य मंत्रणा समिति का मत

कार्य मंत्रणा समिति का मत था कि शून्यकाल के उल्लेखों की अनुमति यथासंभव कम से कम अवसरों पर दी जानी चाहिए और इसके लिए अनुमति मिलने पर किसी सदस्य को दो मिनट से अधिक समय नहीं लेना चाहिए।[21] समिति ने 5 मई, 1993 को हुई अपनी बैठक में ध्यानाकर्षण और विशेष उल्लेख से संबंधित प्रक्रिया पर विस्तार से विचार किया और यह मत प्रकट किया कि यथासंभव कम से कम अवसरों पर ही शून्यकाल के उल्लेखों के लिए अनुमति दी जानी चाहिए।[22] समिति ने 5 अगस्त, 1993 को हुई अपनी बैठक में शून्यकाल को विनियमित करने के उपायों पर विस्तारपूर्वक विचार करके यह सुझाव दिया कि शून्यकाल के उल्लेख के लिए यथासंभव कम से कम अवसरों पर अनुमति दी जानी चाहिए और अनुमति तभी दी जानी चाहिए जब अचानक कोई ऐसा मामला उत्पन्न हो जाए जिसे बिना किसी देरी के उठाना आवश्यक हो और साथ ही एक बैठक में सिर्फ 3 या 4 उल्लेख होने चाहिए। जिस दिन के लिए ध्यानाकर्षण की मद गृहीत कर ली गई हो उस दिन शून्यकाल के उल्लेखों की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।[23] समिति ने 19 अगस्त, 1993 को हुई अपनी बैठक में इस सिफारिश को दोहराया।[24]

नियम समिति की सिफारिशें

नियम समिति ने अन्य बातों के साथ शून्यकाल के उल्लेखों की प्रथा पर विचार किया और यह मत व्यक्त किया कि:

(i) शून्यकाल के उल्लेखों में आधा घंटे से अधिक समय नहीं लगना चाहिए;

(ii) सामान्यत: शून्यकाल के उल्लेखों की कुल संख्या प्रतिदिन सात से अधिक नहीं होनी चाहिए और किसी भी स्थिति में वह दस से अधिक नहीं होनी चाहिए और किसी सदस्य को ऐसा उल्लेख करने में तीन मिनट से अधिक समय नहीं लेना चाहिए;

(iii) किसी सप्ताह के दौरान कोई सदस्य सिर्फ एक विशेष उल्लेख या शून्यकाल उल्लेख कर सकता है; और

(iv) शून्यकालिक उल्लेखों और विशेष उल्लेखों को अपराह्न 1 बजे सदन को मध्याह्न-भोजन के लिए स्थगित करने से पहले समाप्त हो जाना चाहिए।[25]

30 मई, 1995 को सदन ने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया जिसमें समिति की सिफारिशों पर सहमति प्रकट की गई थी।

वर्तमान प्रथा

30 मई, 1995 को अपने सातवें प्रतिवेदन में अंतर्विष्ट शून्यकालिक उल्लेखों के संबंध में नियम समिति की सिफारिश को स्वीकार करने के बाद वर्ष 1999 के प्रारम्भ तक न्यूनाधिक रूप से एक प्रथा का विकास हुआ है जिसके अनुसार सदस्यगण सभापति से उनके कक्ष में मिलते हैं और उन्हें लिखित रूप से यह सूचित करते हैं कि वे किन विषयों को उठाना चाहते हैं। सामान्यत: वे ही सदस्य सदन में किसी मामले को उठा सकते हैं जिन्हें उसे उठाने की अनुमति दी गई हो। तथापि, मई 1999 से शून्यकालिक उल्लेख के माध्यम से अविलम्बनीय लोक महत्व के विषयों को उठाने के लिए सदस्यों को अनुमति देने संबंधी मामला बहुत दुर्लभ है, क्योंकि शून्यकाल में जो कुछ कहा जाता है उस पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है और शून्यकाल में उठाए गए विषयों पर सरकारी प्रतिक्रिया सुनिश्चित किए जाने के लिए कोई तंत्र भी नहीं है। अब सिर्फ अति असाधारण परिस्थितियों अथवा आत्ययिकता के होने पर ही सभापति शून्यकाल के उल्लेख के माध्यम से अविलम्बनीय लोक महत्व के विषय को उठाने की अनुमति प्रदान करते हैं। सदस्यों द्वारा उठाए गए विषयों पर सरकारी प्रतिक्रिया सुनिश्चित करने के लिए, अविलम्बनीय लोक महत्व के विषयों को उठाए जाने हेतु एक अन्य संसदीय उपाय (विशेष उल्लेख) को इससे संबंधित नियम बनाकर सशक्त बनाया गया है और सदस्यों को शून्यकाल के उल्लेख की अनौपचारिक विधि की अपेक्षा अपने विषय विशेष उल्लेख के माध्यम से उठाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

अनुवर्ती कार्यवाही

विशेष उल्लेखों के बारे में अनुवर्ती कार्यवाही की जाती है किन्तु शून्यकाल के उल्लेखों के बारे में ऐसा नहीं किया जाता। 1992 में संसद् के कुछ सदस्यों के सुझाव पर संसदीय कार्य मंत्रालय ने यह निर्णय किया कि भारत सरकार के मंत्रालयों के लिए विशेष उल्लेखों की भांति शून्यकाल के उल्लेखों के बारे में सदस्यों को उत्तर भेजना अनिवार्य होना चाहिए।[26] तब से सचिवालय हर दिन के शून्यकाल के उल्लेखों से संबंधित कार्यवाही को संसदीय कार्य मंत्रालय के पास आगे की कार्यवाही के लिए भेजता रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि शून्यकाल के उल्लेखों के बारे में संसदीय कार्य मंत्रालय द्वारा मंत्रालयों को अभी तक प्रक्रिया संबंधी निर्देश जारी नहीं किए गए हैं। इस प्रकार मामला यहीं पर अटका हुआ है।

टिप्पणियां तथा संदर्भ

1. द कन्साइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी
2. द रैन्डम हाउस डिक्शनरी
3. वैब्स्टर्स थर्ड न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी
4. उदाहरण के लिए राज्य सभा वाद-विवाद, 3.5.1994, 10.5.1994, 24.8.1994 और 26.8.1994 **देखिए**

5. राज्य सभा वाद-विवाद, 12.8.1985, कालम 239
6. जर्नल ऑफ पार्लियामेंटरी इन्फॉर्मेशन, मार्च 1992
7. डा॰ बलराम जाखड़ द्वारा लिखित 'पीपल, पार्लियामेंट एंड एडमिनिस्ट्रेशन' में उद्धृत की गई प्रोफेसर रंगा की टिप्पणियां
8. राज्य सभा वाद-विवाद, 2.6.1967, कालम 1962; राज्य सभा वाद-विवाद, 7.8.1968, कालम 2433 भी **देखिए**
9. सेकेंड रिपोर्ट फ्रॉम द सिलेक्ट कमिटी ऑन प्रोसीजर (हाउस ऑफ कामन्स, 1966-67, 282) ऑन अर्जेंट एंड टॉपिकल डिबेट्स, पैरा 12
10. स्पीकर द्वारा समिति को भेजा गया ज्ञापन, - वही-
11. राज्य सभा वाद-विवाद, 14.12.1981, कालम 173-74
12. -वही- 29.8.1991, कालम 120
13. -वही- 19.7.1991, कालम 129
14. -वही- 17.9.1991, कालम 28
15. -वही- 27.7.1993, कालम 283
16. -वही- 3.8.1993, कालम 2
17. -वही- 12.8.1985, कालम 239
18. -वही- 13.12.1985, कालम 200–02
19. -वही- 6.5.1986, कालम 183–86
20. स्टेट्समैन, 25.3.1985
21. कार्य मंत्रणा समिति का कार्यवृत्त, 1.8.1991
22. -वही- 5.5.1993
23. -वही- 5.8.1993
24. -वही- 19.8.1993
25. नियम समिति का सातवां प्रतिवेदन; राज्य सभा वाद-विवाद, 14.2.1995 भी **देखिए;** तथापि, राज्य सभा वाद-विवाद, 21.3.1995, 23.3.1995, 28.3.1995, 30.3.1995 और 31.7.1995 भी **देखिए** जब शून्यकाल काफी देर तक चला
26. फाइल सं॰ 51/3/92-एल